Purva Mimaansa
A Multi-discipinary Bi-annual Research Journal
(Peer Reviewed, Refereed)

Vol. 10 No. 1-2, March-Sep. 2019
ISSN : 0976-0237
UGC Approved Journal No. 40903
Impact Factor 3.765

दण्डनीति की प्रासङ्गिकता : प्रजा के कुशलक्षेम के परिप्रेक्ष्य में

*डा॰ विशाल भारद्वाज

वेदत्रयी, आन्वीक्षिकी, वार्ता तथा दण्डनीति नामक चार विद्याओं की चर्चा धर्मशास्त्रीय तथा नीतिशास्त्रीय ग्रन्थों में वर्णित है—

त्रैविद्येभ्यस्त्रयीं विद्यां दण्डनीतिं च शाश्वतीम्।
आन्वीक्षिकीं चात्मविद्यां वार्तारभ्यांश्च लोकतः।।1
आन्वीक्षिकी त्रयी वार्त्ता दण्डनीतिश्च शाश्वती।
विद्याश्चचतस्र एवैता अभ्यसेद् नृपतिः सदा।।2
आन्वीक्षिकी त्रयी वार्ता दण्डनीतिश्चेति विद्याः।3

इनमें दण्डनीति का अत्यधिक महत्त्व है। महर्षि शुक्राचार्य के अनुयायी विद्वानों ने तो केवल दण्डनीति को ही विद्या स्वीकार करते हुये इसे सम्पूर्ण विद्याओं का स्थान एवं कारण माना है—

'दण्डनीतिरेका विद्येत्यौशनसाः। तस्यां हि सर्वविद्यारम्भाः प्रतिबद्धा इति।'4

धर्मशास्त्रीय तथा नीतिशास्त्रीय ग्रन्थों के अनुसार दमन करना ही दण्ड कहलाता है एवं यह दण्ड राजधर्म का परम रक्षक होने के कारण अत्यन्त प्रासंगिक है—

दण्डो दमनादित्याहुस्तेनादान्तान् दमयेद्... ।5
दमो दण्ड इति ख्यातः...।।6
...दण्ड एव हि धर्माणां शरणं परमं स्मृतम्।।7

आचार्य चाणक्य के मतानुसार आन्वीक्षिकी, त्रयी एवं वार्ता की सुख-समृद्धि दण्ड पर ही निर्भर करती है एवं दण्ड को प्रतिपादित करने वाली नीति 'दण्डनीति' कहलाती है। यही अप्राप्त वस्तुओं को प्राप्त करवाती है, प्राप्त वस्तुओं की रक्षा करती है, रक्षित वस्तुओं की वृद्धि करती है तथा संवर्द्धित वस्तुओं को समुचित कार्यों में लगाने का निर्देश देती है—

'आन्वीक्षकीत्रयीवार्तानां योगक्षेमसाधनो दण्डः। तस्य नीतिर्दण्डनीतिः।
अलब्धलाभार्थाः, लब्धपरिरक्षणीः, रक्षितविवर्धनीः, वृद्धस्य तीर्थेषु प्रतिपादनी च।।'8

नीतिशास्त्र का मानना है कि बिना दण्डभय से कोई कभी भी सही मार्ग पर प्रवृत्त नहीं

संस्कृत विभाग, हिन्दू कॉलेज, अमृतसर।

Vol. 10 No. 1-2, March-Sep. 2019
ISSN : 0976-0237
UGC Approved Journal No. 40903
Impact Factor 3.765

होता—

न हि जातु विना दण्डं कश्चिन्मार्गेऽवतिष्ठते।... 9

धर्मशास्त्र तथा नीतिशास्त्र दोनों की ऐसी मान्यता है कि दण्ड के भय से ही स्थावर एवं जङ्गम सभी जीव अपने भोगों को भोगने में समर्थ होते हैं तथा नियमित होकर अपने धर्म से विचलित नहीं होते, अन्यथा दण्डाभाव में मनुष्यों का श्रेष्ठाचरण में प्रवृत्त होना दुर्लभ है—

तस्य सर्वाणि भूतानि स्थावराणि चराणि च।
भयाद्भोगाय कल्पन्ते स्वधर्मान्न चलन्ति च।।
सर्वो दण्डजितो लोको दुर्लभो हि शुचिर्नरः।
दण्डस्य हि भयात्सर्वं जगद्भोगाय कल्पते।।10
नियतविषयवर्ती प्रायशो दण्डयोगा ज्जगति परवशेऽस्मिन्दुर्लभः साधुवृत्तः।
कृशमपि विकलं वा व्याधितं वाऽधनं वा पतिमपि कुलनारी दण्डभीत्याऽभ्युपैति।। 11

मनुष्यों की बात तो छोड़ें, देवता, दानव, राक्षस, गन्धर्व, पक्षी, सर्पादि भी दण्ड के भय से पीड़ित होकर अपनी क्रियाओं में संलग्न रहते हैं—

देवदानवगन्धर्वा रक्षांसि पतगोरगाः।
तेऽपि भोगाय कल्पन्ते दण्डेनैव निपीडिताः।।12

अर्थशास्त्रानुसार यदि दण्डव्यवस्था समाप्त कर दी जाए तो उसका कुप्रभाव यह होगा कि जिस प्रकार छोटी मछली को बड़ी मछली खा जाती है, वैसे ही बलवान् व्यक्ति निर्बल व्यक्ति को दबाकर उसका जीवन कष्टमय बना देगा। दण्ड व्यवस्था के अभाव में सर्वत्र ही अराजकता फैल जाती है तथा निर्बल को बलवान् सताने लगता है, किन्तु दण्डधारी राजा से रक्षित दुर्बल भी बलवान् बना रहता है—

...अप्रणीतो हि मात्स्यन्यायमुद्भावयति। बलीयानबलं हि ग्रसते दण्डधराभावे।
तेन गुप्तः प्रभवतीति।।13

प्रजा के कुशलक्षेम हेतु दण्डनीति की प्रासङ्गिकता इसी बात से सिद्ध हो जाती है कि धर्मशास्त्रकार महर्षि मनु ने भी वर्णन किया है कि राजा दण्ड के द्वारा अप्राप्त को प्राप्त करने की इच्छा करे, प्राप्त द्रव्यों की देखभाल करते हुए रक्षित उनको व्यापार आदि के माध्यम से बढ़ावे तथा बढ़ाए हुए उन द्रव्यों को सत्पात्रों में दान कर दे—

अलब्धमिच्छेद्दण्डेन लब्धं रक्षेदवेक्षया।
रक्षितं वर्धयेत् बुद्धया वृद्धं पात्रेषु निक्षिपेत्।।14

अतः राजा को प्रजा के कुशलक्षेम अर्थात् कुशल मंगल को सर्वप्रमुख रखते हुये दण्डनीति का औचित्यपूर्ण प्रयोग करना चाहिये। प्रजा के कुशलक्षेम हेतु दण्ड व्यवस्था न तो अत्यधिक कठोर होनी चाहिए तथा न ही अत्यन्त नम्र। कठोर दण्ड देने वाले राजा से सभी प्रजाजन उद्विग्न हो उठते हैं तथा दण्ड में ढिलाई करने से प्रजा राजा की अवहेलना करने लगती

Vol. 10 No. 1-2, March-Sep. 2019
ISSN : 0976-0237
UGC Approved Journal No. 40903
Impact Factor 3.765

है। इसलिए राजा को समुचित दण्ड का प्रयोग करना चाहिए—

दण्डपारुष्यात् सर्वजनद्वेष्यो भवति।।15

'तीक्ष्णदण्डो हि भूतानामुद्वेजनीयः। मृदुदण्डः परिभूयते। यथार्हदण्डः पूज्यः। सुविज्ञाप्रणीतो हि दण्डः प्रजा धर्मार्थकामैर्योजयति।।'16

आवश्यकता से अधिक दण्ड का भी नीतिशास्त्र में विरोध किया गया है। शुक्रनीति का कहना है कि राजा को चाहिए कि वह अपराधी को अपराध के अनुसार दण्डित करे—

...अतिदण्डाच्च गुणिभिस्त्यज्यते पातकी भवेत्।।17

अतः सुभागदण्डी स्यात्...।।18

आचार्य कौटिल्य का भी यही मानना है—

...यथापराध इति कौटिल्यः।19

अपराधानुरूपी दण्डः।।20

धर्मशास्त्रकार महर्षि मनु की ऐसी मान्यता है कि दण्ड प्रक्रिया में राजा को यमराज का अनुकरण करना चाहिए। जिस प्रकार यमराज समय उपस्थित होने पर प्रिय तथा अप्रिय दोनों को समाप्त कर देता है, उसी प्रकार राजा भी प्रिय-अप्रिय के भेदभाव को भुला कर दण्डनीय प्राणियों को दण्डित करे, यह राजा का 'यमव्रत' कहलाता है—

यथा यमः प्रियद्वेष्यौ प्राप्ते काले नियच्छति।

तथा राज्ञा नियन्तव्याः प्रजास्तद्धि यमव्रतम्।।21

प्रजा के कुशलक्षेम के लिये नीतिशास्त्र का भी कथन है कि यमराज जैसे कुकर्मियों को दण्डित करता है, राजा भी उसी प्रकार पापियों को दण्डित करे—

दुष्कर्मदण्डको राजा यमः स्याद् दण्डकृद् यमः।...22

धर्मशास्त्रानुसार राजा अपने राज्य में न्यायपूर्वक दण्ड प्रयोग करे, शत्रुओं के देश में कठोर दण्ड प्रयोग व स्वाभाविक मित्रों से सरल व्यवहार करे—

स्वराष्ट्रे न्यायवृत्तः स्याद् भृगदण्डश्च शत्रुषु।

सुहृत्स्वजिह्मः स्निग्धेषु ब्राह्मणेषु क्षमान्वितः।।23

अतः राजा को चाहिए कि वह औचित्य को ध्यान में रखते हुये पुनः पुनः किए गए अपराध, देश, काल, अपराधी की शारीरिक तथा आर्थिक शक्ति, आयु, कार्य तथा अपराध के गौरव-लाघव का वास्तविक विचार कर दण्डनीय व्यक्ति को दण्डित करे—

अनुबन्धं परिज्ञाय देशकालौ च तत्त्वतः।

सारापाधौ चालोक्य दण्डं दण्ड्येषु पातयेत्।।24

ज्ञात्वाऽपराधं देशं च कालं बलमथापि वा।

Vol. 10 No. 1-2, March-Sep. 2019
ISSN : 0976-0237
UGC Approved Journal No. 40903
Impact Factor 3.765

वयः कर्म च पित्तं च दण्डं दण्ड्येषु पातयेत्।।25

पुरुषं चापराधं च कारणं गुरुलाघवम्।

अनुबन्धं तदात्वं च देशकालौ समीक्ष्य च।।

उत्तरावरमध्यत्वं प्रदेष्टा दण्डकर्मणि।

राज्ञश्च प्रकृतीनां च कल्पयेदन्तरा स्थितः।।26

आज जहां हमारे देश में बिना अपराध की जांच किये किसी को दण्डित करने की व्यवस्था की जा रही है, वहीं धर्मशास्त्रानुसार प्रजा के कुशलक्षेम हेतु धर्मविरुद्ध दण्ड का प्रयोग करते हुए अर्थात् अदण्डनीय को दण्डित करते हुए तथा दण्डनीय को क्षमा करते हुए राजा के यश एवं कीर्त्ति का नाश होता है तथा स्वर्ग से वञ्चित रहते हुए उसे नरक प्राप्ति होती है—

अधर्मदण्डनं लोके यशोघ्नं कीर्त्तिनाशनम्।

अस्वर्ग्यं च परत्रापि तस्मात्तत्परिवर्जयेत्।।

अदण्ड्यान्दण्डन्राजा दण्ड्यांश्चैवाप्यदण्डयन्।

अयशो महदाप्नोति नरकं चैव गच्छति।। 27

अवध्य का वध करने में जितना अधर्म होता है, उतना ही अधर्म अपराधी को क्षमा करने में राजा को होता है। अतः दण्ड-पद्धति में राजा को शास्त्रीय नियमों का पालन करना चाहिए—

यावानवध्यस्य वधे तावान्वध्यस्य मोक्षणे।

अधर्मो नृपतेर्दृष्टो धर्मस्तु विनियच्छतः।। 28

नीतिशास्त्र का भी मानना है कि प्रजा का कुशलक्षेम तभी सम्भव है, जब दण्ड व्यवस्था ऐसी हो, जिसमें दण्डनीय व्यक्ति को छोड़ा न जाए तथा निर्दोष को दण्डित न किया जाए—

दण्ड्यस्यादण्डनान्नित्यमदण्ड्यस्य च दण्डनात्।

अतिदण्डाच्च गुणिभिस्त्यज्यते पातकी भवेत्।।29

अतः औचित्यपूर्वक केवल अपराधी व्यक्ति को ही अपराध सिद्ध हो जाने की स्थिति में दण्डित किया जाना चाहिये—

आप्तदोषं कर्म कारयेत्।।30

यद्यपि शुक्रनीति तीक्ष्ण दण्ड देने की पक्षधर नहीं है, किन्तु कतिपय परिस्थितियों में प्राणदण्ड देने की बात भी धर्मशास्त्र तथा नीतिशास्त्र दोनों में की गई है। नीतिशास्त्र में 'आततायी' का लक्षण बताया गया है। किसी के खेत, घर अथवा सम्पत्ति में आग लगाने वाला, जान लेने के लिए विष देने वाला, हथियार उठाकर हत्या करने वाला, धरती एवं धन हड़पने वाला तथा परस्त्री का अपहरण करने वाला— ये छः प्रकार के लोग आततायी कहलाते हैं—

अग्निदो गरदश्चैव शस्त्रोन्मत्तो धनापहः।

क्षेत्रदारहरश्चैतान् षड्विद्यादाततायिनः।। 31

Vol. 10 No. 1-2, March-Sep. 2019
ISSN : 0976-0237
UGC Approved Journal No. 40903
Impact Factor 3.765

नीतिशास्त्र एवं धर्मशास्त्र दोनों ही ऐसे आततायी के वध को दोष स्वीकार नहीं करते—

...नाततायिवधे दोषो हन्तुर्भवति कश्चन।।32

नाततायिवधे दोषो हन्तुर्भवति कश्चन।... 33

इसीलिए धर्मशास्त्र ऐसे आततायी को बिना-विचारे मार देने की बात करता है चाहे वह गुरु, बालक, बूढ़ा अथवा बहुश्रुत ब्राह्मण भी क्यों न हो—

गुरुं वा बालवृद्धौ वा ब्राह्मणं वा बहुश्रुतम्।
आततायिनमायान्तं हन्यादेवाविचारयन्।।34

धर्मशास्त्र तथा नीतिशास्त्र दोनों दण्ड के विपरीत क्षमा की निन्दा करते हैं। धर्मशास्त्रानुसार बलात्कार, धन-अपहरण जैसे कुकर्मों में यदि राजा अपराधी को क्षमा करता है तो उसका शीघ्रनाश अवश्यंभावी है—

साहसे वर्तमानं तु यो मर्षयति पार्थिवः।
विनाशं व्रजत्याशु विद्वेषं चाधिगच्छति।।35

नीतिशास्त्र में भी बताया गया है कि शत्रु एवं मित्र पर क्षमा करना केवल तपस्वियों का ही भूषण है। राजा के लिए तो अपराधियों को क्षमा करना दूषण ही है—

क्षमा शत्रौ च मित्रे च यतीनामेव भूषणम्।
अपराधिषु सत्त्वेषु नृपाणां सैव दूषणम्।। 36

शासक को दण्ड देते समय अपने-पराये का कोई भी भेदभाव नहीं करना चाहिए। धर्मशास्त्रानुसार राजा का पिता, उसका आचार्य, मित्र, माता, स्त्री, पुत्र एवं पुरोहित भी यदि धर्मनिष्ठ न हों तो, ये सभी राजा के लिए पूजनीय अथवा निकट सम्बन्धी होते हुए भी दण्डनीय हैं—

पिताऽऽचार्यः सुहृन्माता भार्या पुत्रः पुरोहितः।
नादण्ड्यो नाम राज्ञोऽस्ति यः स्वधर्मे न तिष्ठति।।37

नीतिशास्त्र का भी कथन है कि राजा आज्ञाभङ्ग करने वाले अपने पुत्रों को भी क्षमा न करे, क्योंकि ऐसा न करने पर पराक्रमी राजा में तथा चित्र में लिखित राजा में कोई अन्तर नहीं रहेगा—

आज्ञाभङ्गकरान् राजा न क्षमेत् स्वसुतानपि।
विशेषः को नु राज्ञश्च राज्ञश्चित्रगतस्य च।।38

यदि राजा मोहवश इन दण्डनीय लोगों को दण्डित नहीं करता, तो वह पाप सौ गुणा होकर राजा को लगता है, ऐसा धर्मशास्त्र का कहना है—

Vol. 10 No. 1-2, March-Sep. 2019
ISSN : 0976-0237
UGC Approved Journal No. 40903
Impact Factor 3.765

न चेत्तान्पीडयेद्राजा कथंचित्काममोहितः।
तत्पापं शतधा भूत्वा तमेव परिसर्पति।।39

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि न्याय प्रणाली एवं दण्ड व्यवस्था के अनौचित्यपूर्ण होने पर समाज में अव्यवस्था फैली रहती है तथा इसके विपरीत यदि दण्ड-व्यवस्था उत्तम, सुदृढ़ तथा औचित्यपूर्ण हो तो प्रशासक एवं नागरिक सुखमय परिवेश का अनुभव करते हैं। अतः प्रजा के कुशलक्षेम हेतु उस समाज में प्रचलित दण्डनीति की अत्यन्त प्रासङ्गिकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. मनुस्मृति, 7/43
2. शुक्रनीति, 1/152
3. अर्थशास्त्र, 1/1/1 , पृष्ठ संख्या—84.
अर्थशास्त्र, 1/1/1, पृष्ठ संख्या—8
5. गौतमस्मृति, 11/6
6. शुक्रनीति, 1/157
7. शुक्रनीति, 4/1/52
8. अर्थशास्त्र, 1/1/3, पृष्ठ संख्या—12
9. शुक्रनीति, 4/5/283
10. मनुस्मृति, 7/15, 22
11. हितोपदेश, 1/206
12. मनुस्मृति, 7/23
13. अर्थशास्त्र, 1/1/3, पृ० सं० 13
14. मनुस्मृति, 7/101
15. चाणक्यसूत्र, सूत्र सं०-76
16. अर्थशास्त्र, 1/1/3, पृ० सं० 12
17. शुक्रनीति, 4/1/54.12
18. वही, 4/1/97
19. अर्थशास्त्र, 3/74/17, पृ० सं०-328 20. चाणक्यसूत्र, सूत्र सं०-328
21. मनुस्मृति, 9/307
22. शुक्रनीति, 1/75
23. मनुस्मृति, 7/32
24. वही, 8/126
25. याज्ञवल्क्यस्मृति, 1/368
26. अर्थशास्त्र, 4/85/10, पृ० सं०-388
27. मनुस्मृति, 8/127-128
28. वही, 9/249
29. शुक्रनीति, 4/1/54
30. अर्थशास्त्र, 4/83/8, पृ० सं०-377
31. शुक्रनीति , 3/41
32. वही, 4/7/325
33. मनुस्मृति, 8/351
34. वही, 8/350
35. मनुस्मृति, 8/346
36. हितोपदेश, 2/180
37. मनुस्मृति, 8/335
38. हितोपदेश, 2/107
39. लघुयमस्मृति, श्लोक सं०-60